thearyasamaj.org

RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.
वर्ष: 71 अंक : 41
सृष्टि संवत् 1960853115
18 जनवरी 2015
दयानन्दाब्द 189
वार्षिक : 100 रू.
आजीवन : 1000 रू.
दूरभाष : 2292926, 5062726

जालन्धर

वर्ष-71, अंक : 41, 15/18 जनवरी 2015 तदनुसार 5 माघ सम्वत् 2071 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

प्राण आत्मा को चमकाते हैं

ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र यत्ते जनिम चारू चित्रम्।
पदं यद्विष्णोरुपमं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम्।।

-ऋ. 5/3/3

शब्दार्थ- हे **रुद्रः**-आत्मन्! **मरुतः**- प्राण **तव**- तेरी **श्रिये**- शोभा के लिये तुझे **मर्जयन्त** - चमकाते हैं, शोधते हैं **यत्** - जो **ते** - तेरा **चारु**- मनोहर, सुन्दर **चित्रम्**- विचित्र, अद्भुत **जनिम**- उत्पन्न होना है, आविर्भाव है और **यत्**- जो **विष्णोः**- विष्णु के **उपमम्** - समान **पदम्** - पद, स्थान **निधायि** - तूने धारण किया है **तेन्**- उसके द्वारा तू **गोनाम्** - गौओं के, इन्द्रियों के **गुह्यम्** - गुप्त **नाम** - नाम को, सामर्थ्य को **पासि** - रक्षित करता है।

व्याख्या- आत्मा अमर है, शरीर मर्त्य है। आत्मा अविनाशी है, शरीर विनाशी है किन्तु वासना के कारण **अमृतो मर्त्येन सयोनिः** (ऋ. 1/164/30) अमृत आत्मा मर्त्य के साथ एक ठिकाने वाला हो रहा है।

शुद्ध, पवित्र, विमल, उज्ज्वल, जीव अशुद्ध, अपवित्र, समल, अंधेरे, शरीर में आ फंसा है। यही आत्मा का **चारु चित्रं जनिम**- सुन्दर, अद्भुत जन्म है। आत्मा विष्णु समान बना हुआ है। विष्णु संसार में रहता हुआ संसार का संचालन कर रहा है। शरीर में बैठा आत्मा शरीर का संचालन कर रहा है। यही बात उत्तरार्ध में कही गई है-

पदं यद्विष्णोरुपमं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम्।

विष्णु के समान पद को धारण कर रहा है, इसी से तू इन्द्रियों के गुप्त सामर्थ्य की रक्षा करता है। संसार के पदार्थों में जो अद्भुत सामर्थ्य है, वह सारी भगवान की देन है। इसी प्रकार आंख में देखने की शक्ति, कान में सुनने की शक्ति तथा अन्य इन्द्रियों के बल सभी आत्मा के बल हैं। कठोपनिषत् में ठीक ही कहा है-

येन रूपं रसं गन्धं शब्दान् स्पर्शांश्च मैथुनान्।
एतेनैव विजानाति किमत्र परिशिष्यते। एतद्वै तत्।। 2/1/3

जिसके द्वारा रूप, रस, गन्ध, शब्द और संयोग जन्य स्पर्शों को जानता है, उसी के द्वारा विशेष जानता है। वह क्या शेष रहता है? वह यह है।

जो आंख-नाक के द्वारा काम करता, जो दिखाई नहीं देता और इन सब का संचालन करता है। ये इन्द्रियां तथा देह तो नष्ट हो जाते हैं, किन्तु वह नहीं मरता, शेष रहता है। यही आत्मा है। जगत्संचालक जगत् का संचालन करता हुआ साधारण जनों को इन आंखों से नहीं दीखता, ऐसे ही यह आत्मा भी देहरूप ब्रह्माण्ड को धारण करता हुआ इन आंखों से नहीं दीख पाता है। दोनों में कैसा सादृश्य है। इस सादृश्य के दिखाने का प्रयोजन है कि हे जीव! तू भी छोटा सा ईश्वर है। तुझे अपनी महिमा को भुलाना नहीं चाहिए। संसार के सभी पदार्थ भगवान की महिमा का बखान कर रहे हैं। शरीरगत प्राण आत्मा की महत्ता का व्याख्यान कर रहे हैं। जब तक आत्मा शरीर में रहता है, तब तक प्राणों की क्रिया भी रहती है, ज्यों ही आत्मा ने प्रयाण किया, कूच किया, तभी प्राण भी प्रयाण कर जाते हैं। प्रश्नोपनिषत् 2/4 में इसका बहुत सुन्दर वर्णन है। वहां आता है कि आंख नाक को यह अभिमान हो गया कि हम ही इस शरीर के धारक हैं। आत्मा ने उन्हें कहा कि ऐसे अज्ञान में मत फंसो, मैं ही प्राण का पांच प्रकार से विभाग करके इस शरीर को धारण करता हूं। उन्हें विश्वास न हुआ। तब-

सोऽभिमानादूर्ध्वमुत्क्रमत इव, तस्मिन्नुत्क्रामत्यथेतरे सर्व एवोत्क्रामन्ते, तस्मिंश्च प्रतिष्ठमाने सर्व एव प्रातिष्ठन्ते। तद्यथा मक्षिका मधुकरराजानमुत्क्रामन्तं सर्वा एवोत्क्रामन्ते तस्मिंश्च प्रतिष्ठमाने सर्वा एव प्रातिष्ठन्त एवं वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रं च।

वह थोड़ा सा ऊपर को निकला। उसके बाहर निकलने पर सभी निकलने लगे, उसके ठहर जाने पर सभी ठहर गये। जैसे रानी मक्खी के उड़ने पर सभी मक्खियां उड़ पडती हैं, ठहरने पर ठहर जाती हैं। ऐसा ही वाणी, मन, आंख, कान का हाल हुआ।

किन्तु इतना शक्तिशाली, भगवान् की समानता वाला, भगवान के समान निष्काम न होने से मैला हो गया है। इसकी शोभा पर, इसकी चमक पर परदा पड गया है, उसे हटाने के लिये प्राणायाम किया जाता है-

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त।

तेरी शोभा के लिये प्राणशोधन करते हैं। आत्मा को जब अपने दोषों का ज्ञान होता है, तब वह सभी साधनों का अनुष्ठान करता है। प्राणायाम एक सरल साधन है। ऋषि लोग भी वेद के इस मंत्र को सम्मुख रख कर प्राणायाम का उपदेश करते हैं, जैसा कि मनु जी ने कहा- प्राणायामैर्दहेद् दोषान् प्राणायामों के द्वारा दोषों को जलाए।

ऋषि ने लिखा है-जब मनुष्य प्राणायाम करता है तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। -सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

प्राणायाम से शरीर और आत्मा दोनों की शुद्धि होती है। मल दूर होने से आत्मा चमकता है।

-स्वाध्याय संदोह से साभार

thearyasamaj.org

स्वाध्याय के लाभ

-ले० स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

(गतांक से आगे)

इसलिए प्राचीन-काल के आश्रमों का वर्णन पढ़ने से ज्ञात होता है कि उनका स्थान पर्वतों की उपत्यकाओं में अथवा नदियों के संगम पर हुआ करता था। आज बड़े-बड़े नगरों में भी इसकी आवश्यकता अनुभव की जाती है। तभी कहीं कृत्रिम पर्वत, कहीं कृत्रिम प्रपात, कृत्रिम उपवन (पार्क) और स्त्रोत बनाए जाते हैं। परन्तु उनमें स्वाभाविकता कहां ? पर्वतों और नदियों को नगरों में लाने की अपेक्षा यह अधिक उचित है कि जहां पर्वत और नदियां हों, वहां चला जाए, जिससे मेधा का विकास हो और राष्ट्र में मेधावी जन उत्पन्न हों। अब न मेधा का विकास हो पाता है और न विप्र बन पाते हैं। आज—"**उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्**" की जगह 'उपह्वरे फैक्ट्रीनां संगमे च गन्दी नालीनाम्' का सर्वत्र बोल-बाला है। ऐसी अवस्था में मेधावी की तलाश करना दुराशा मात्र है। अब तो बात कुछ "**धिया विप्रो अजायत**" की जगह "**लिप्सया धूर्तो अजायत**" वाली दीखती है। इसी बात के महत्त्व को समझकर भगवान् मनु ने लिखा था—

अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमास्थितः।
सावित्रीमप्यधीयीत गत्वाऽरण्यं समाहितः।। मनु०२। १०४।।

इसमें '**अपां समीपे**' और '**अरण्यं समाहितः**' दोनों ही विधियां देश का निर्देश कर रही हैं। जिसे वेद में "**संगमे च नदीनां**" कहा है, उसको मनु ने **अपां समीपे** कहा है। जिसे वेद में **उपह्वरे गिरीणां** कहा है, उसको मनु ने **अरण्यं समाहितः** कहा है। इस वातावरण के महत्त्व को समझकर ही उन्होंने इस ओर निर्देश किया है। स्वाध्याय के लिए स्थान जितना भी प्राकृतिक हो, उतना ही उत्तम है। उद्देश्य एक ही है कि स्थान ऐसा हो, जहां स्वतः मन एकाग्र हो सके, चित्त की चंचलता मिट जाए और व्यक्ति स्वाध्याय-यज्ञ में निमग्न हो जाए।

परन्तु इस सूत्र को हाथ से छोड़ना ठीक नहीं कि 'साधन के पीछे साध्य को न छोड़ दिया जाये'। मुख्य और गौण का विमर्श रखना चाहिए। मुख्य के लिए गौण को छोड़ा जा सकता है, परन्तु किसी भी अवस्था में गौण के लिए मुख्य को नहीं छोड़ा जा सकता। स्वाध्याय मुख्य है, देश और काल गौण हैं।

काल : वातावरण में जहां स्थान का महत्त्व है, वहां काल का भी अपना महत्त्व है। काल की दृष्टि से जो ब्राह्म-मुहूर्त का महत्त्व है, वह प्रातः का नहीं और जो प्रातः का महत्त्व है, वह सायंकाल का नहीं। जो एकाग्रता प्रातःकाल आती है, वह सायंकाल नहीं आती और जो सायंकाल मन की स्थिति हो जाती है, वह मध्याह्न और रात्रि में नहीं होती। इसलिए ब्रह्मयज्ञ का वही समय रखा गया है, जब प्रकृति में भी सन्धिवेला हो, सन्ध्या हो। यही दोनों समय स्वाध्याय के लिए उपयुक्त हैं। फिर भी अपेक्षाकृत प्रातःकाल को सायंकाल से अधिक सात्त्विक माना जाता है। प्रातःकाल व्यक्ति "**तमसो मा ज्योतिर्गमय**" का प्रत्यक्ष दर्शन करता है, जबकि सायंकाल ठीक इसके विपरीत होता है; अतः स्वाध्याय के लिए काल तो प्रातः ही अत्युत्तम है। मन का सात्त्विक और एकाग्र होना आवश्यक है। इसीलिए देश और काल की अपेक्षा होती है। प्रातःकाल स्वतः सिद्ध, सात्त्विक वेला है, जबकि सायंकाल को सात्त्विक बनाना पड़ता है। प्रातःकाल की सात्त्विकता प्रकृति के मुख से ही मुखरित हो रही होती है। वृक्ष, लता, पुष्प, फल सभी में सात्त्विकता के दर्शन हो रहे होते हैं। अणु-अणु और कण-कण में अपूर्व उल्लास भरा होता है। यह सब समय का प्रभाव है। मनुष्य का मन प्रातःकाल जिस उल्लास का अनुभव करता है, वैसा किसी अन्य समय नहीं। इसलिए स्वाध्याय प्रातःकाल ही करे। इस विषय में गौण-मुख्य का अवश्य ध्यान रखे। कहीं देश और काल को मिष बनाकर स्वाध्याय को न छोड़ बैठे। स्वाध्याय हर अवस्था में करे। प्रातः न सही, मध्याह्न में सही, मध्याह्न में न हो सके तो सायंकाल सही, सायंकाल न हो तो रात्रि को कर ले, परन्तु स्वाध्याय को स्थगित न करे।

स्वाध्याय-काल का निर्णय करते हुए कर्कोपाध्याय ने लिखा है—**हन्तकाराच्च पूर्वं ब्रह्मयज्ञस्यावसरः नृयज्ञो हि हन्तकारादिरास्वापात्**—हन्तकार से पूर्व-पूर्व स्वाध्याय का समय है। अतिथियज्ञ में ही हन्तकार का उच्चारण किया जाता है और अतिथियज्ञ का समय रात्रि-शयन से पूर्व का है, क्योंकि अतिथि के आने का कोई निश्चित समय नहीं। वह ठहरा अ-तिथि, उसके आने का क्या ठिकाना? कब आ जाए! वह सोने के समय भी आ सकता है। जिस समय भी अतिथि आये उसके सत्कार किया जाना चाहिए, क्योंकि यजमान के घर अतिथि का भूखे रहना ठीक नहीं—**नास्याऽनश्नन् गृहे वसेत्**। अतिथियज्ञ से पहले-पहले स्वाध्याय का समय है। अतिथि की प्रतीक्षा सोने से पहले तक की जा सकती है; अतः उससे पहले स्वाध्याय हो जाना चाहिए। स्वाध्याय-समय में इतनी ढील देने का एकमात्र उद्देश्य भी यही है कि स्वाध्याय स्थगित न हो।

तैत्तिरीयारण्यक (२। १२) का कहना है कि यदि व्यक्ति बाहर न जा सके, तो वह गांव में ही स्वाध्याय कर ले, यदि दिन में स्वाध्याय न हो सके तो रात्रि में स्वाध्याय कर ले, यदि बैठकर न कर सके तो खड़ा रहकर या लेटकर स्वाध्याय कर ले। शतपथकार तो लिखते हैं "यदि कोई व्यक्ति सुगन्धित तैल लगाकर शृंगार किये हुए, यथेष्ट भोजन करके तृप्त हुआ, गुदगुदे बिछौने पर लेटा हुआ भी स्वाध्याय कर रहा है, तो जानो वह नखाग्रपर्यन्त तप कर रहा है।"[१]

मनोभूमि : वातावरण से अभिप्राय बाह्य जगत् भी है, अन्तर्जगत् भी। जहां देशकाल की परिशुद्धि आवश्यक है, वहां मन, बुद्धि, चित्त की शुद्धि भी आवश्यक है। मन की व्यग्रता, खिन्नता स्वाध्याय के लिए एक महती बाधा है। भगवान् मनु ने जहां "**अपां समीपे**" और "**अरण्यं समाहितः**" में स्थान निर्देश किया है वहां "**नियतो नैत्यकं विधिमास्थितः**" में अन्तर्जगत् के पवित्र करने पर बल दिया है। अन्यत्र स्वाध्याय की सफलता के लिए "**विधिना नियतः शुचिः**" में भी यही बात देखने में आती है। इसमें नैत्यकं विधिम् और विधिना में स्वाध्याय के लिए जहां उत्तम विधि और **नैत्यक विधि** का निर्देश है, वहां **नियतः, आस्थितः** और शुचिः में अन्तर्मन के पवित्र करने की बात कही गई है। स्वाध्याय करने वाले को ये तीन गुण अवश्य धारण करने चाहिएं।

नियत : नियतः शब्द के कई अर्थ हैं। यथा नित्यः, बुद्धः, नियतेन्द्रियः, संयुक्तः, निश्चितः इत्यादि। यह शब्द "नि" उपसर्ग पूर्वक "यम" धातु से क्त प्रत्यय करके बना है, जिसका अर्थ नियमन वा नियंत्रण है और इसी में उपर्युक्त सभी अर्थ समाविष्ट हो जाते हैं, अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति का हर काम नियत होना चाहिए, नित्य होना चाहिए, निश्चित होना चाहिए, और यह तभी संभव है जब वह अपने पर नियमन वा नियन्त्रण रखे। उसके हर कार्य के नियत होने के अर्थ हैं, स्वाध्याय का स्थान नियत हो, समय नियत हो, पाठ्य-ग्रन्थ नियत हों और पाठ्यविधि नियत हो, साथ ही स्वाध्यायशील व्यक्ति का मन भी नियत हो। स्थान के नियत होने से मन की एकाग्रता में सहायता मिलती है। नियत स्थान पर पहुंचते ही मस्तिष्क अपना कार्य करने लगता है। जो ऊहा अन्यत्र सुप्त थी, वह नियत स्थान पर आते ही स्फुरित हो उठी। साधक-जन कहते हैं कि स्थान के नियत कर लेने से वहां के कण-कण में, लहर-लहर में एक ही विचार समा जाता है। आने वाले दिन फिर वही एक विचार साधक के मन को प्रभावित करने लगता है, व्यक्ति का मन एकाग्र हो जाता है और अगला कार्य स्वयं होने लगता है।

यही बात नियत समय के लिए कही जा सकती है। जैसे-जैसे नियत काल समीप आने लगता है, व्यक्ति का मन तैयार होने लगता है, वैसे-वैसे सावधान होकर वह अन्य कार्यों को समेट लेता है, जिससे नियत समय में बाधा न आने पाए। उसकी मनोभूमिका तैयार होने लगती है। वह सोचने लगता है कि मुझे अभी अपने नित्य कर्म में जुटना है, स्वाध्याय का नियतकाल आ रहा है, तैयार हो जाओ।

समय के नियत हो जाने का एक और लाभ यह होता है कि उसके कार्य में स्थिरता और नित्यता आ जाती है। इसका कारण स्पष्ट है, कि जब व्यक्ति के स्वाध्याय का काल नियत हो तो परिवार का हर छोटा-बड़ा सदस्य ध्यान रखता है कि अब पिताजी के स्वाध्याय का समय है, इन्हें कुछ कहना अथवा छेड़ना ठीक नहीं। साथी, सहयोगी, मित्र, बन्धु-बान्धव सभी परिचित हो जाते हैं कि यह समय स्वाध्याय के लिए नियत है; अतः बजाय बाधक बनने के ये सभी साधक हो जाते हैं। (क्रमशः)

thearyasamaj.org

सम्पादकीय.....

उच्च तथा आदर्श चरित्र मनुष्यत्व की पहचान

मनुष्य की अच्छाई बुराई का निवास उसके मस्तिष्क में है। अपने मस्तिष्क से मनुष्य जैसा सोचता है, वह वैसा ही कार्य करता है और उसी के आधार पर उसके चरित्र का निर्माण होता है। जो मनुष्य अच्छा सोचता है, उसका कार्य भी अवश्य ही अच्छा होता है। मननशील और विवेकशील प्राणी को मनुष्य कहते हैं। विवेक शून्य मनुष्य पशु के समान होता है। जिसमें भले बुरे की पहचान नहीं होती। आचार्य यास्क निरूक्त में मनुष्य की परिभाषा लिखते हैं कि मत्वा कर्माणि सीव्यति अर्थात् जो सोच विचार कर कार्य करता है वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। मनुष्य को मनुष्य बनने के लिए सदैव विवेक से काम लेकर बुराई से बचना और भलाई में प्रवृत्त रहना चाहिए। ऐसा करने से ही मनुष्य मनुष्य कहलाने का अधिकारी होता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे सीखने और जानने से ही ज्ञान प्राप्त होता है। उसका ज्ञान स्वाभाविक और एक समान रहने वाला नहीं होता। यही कारण है कि वह अधिक से अधिक उन्नत और अवनत हो जाता है। बिना समाज के वह न तो पालित-पोषित हो सकता है और न विकसित। इस दृष्टि से वह सर्वथा समाज पर आश्रित रहता है। अच्छे समाज में रहने पर मनुष्य अच्छा और बुरे समाज में रहने पर बुरा बन जाता है। मनुष्य के सम्यक् विकास के लिए आवश्यक है कि उसके आसपास का समाज और वातावरण उत्तम हो। साधारणत: मनुष्य वातावरण और परिस्थिति का दास होता है परन्तु मनुष्य वही होता है जो इन दोनों को उपयोगी बनाकर मनुष्यत्व के आचरण में तत्पर रहे। कोई मनुष्य अच्छा है या बुरा इसकी सबसे सुगम पहचान यह है कि यह देखा जाए कि वह किस प्रकार के समाज के सम्पर्क में रहता है। यदि वह अच्छे व्यक्तियों के संसर्ग में रहता है तो समझो वह अच्छा है और यदि बुरे व्यक्तियों के संसर्ग में रहता है तो वह बुरा है।

मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए आवश्यक है कि उसका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास साथ-साथ हो। सब मनुष्यों का यही ध्येय होना चाहिए, उसी में मनुष्य की महत्ता निहित होती है। इसी महत्ता से मनुष्य धर्मात्मा, बुद्धिमान और निर्भीक बनता है। इन तीनों के बल पर मनुष्य चिन्ताओं से, परेशानियों और भय से मुक्त हो सकता है। मनुष्य की पहचान उसकी शक्ल सूरत, धन वैभव, वस्त्राभूषण से नहीं अपितु उसके चरित्र से, उसकी बातों से और उसके कार्यों से हुआ करती है। उसका चरित्र और कार्य ऐसा होना चाहिए जिससे उसी के द्वारा मनुष्य की प्रशंसा हो। इसी प्रकार धार्मिक, राजनैतिक और शैक्षणिक की पहचान उन मनुष्यों के द्वारा हुआ करती है जिन्हें ये प्रणालियां बनाया करती हैं। परन्तु आज मनुष्य का आचरण पशु की भांति दिखाई पड़ता है। आज का मनुष्य धन, सम्पति और भोग का दास बना हुआ है। आज मनुष्य की योग्यता, विद्वता, मान-सम्मान का मापदण्ड धन-वैभव बना हुआ है। शिक्षा का लक्ष्य आज जीविकोपार्जन हो गया है। राजनीति जुआ है और स्वार्थियों तथा अवसरवादियों का व्यवसाय बनी हुई है। धर्म रोटी का और लोगों को आपस में लड़ाने और मार-काट मचाने का साधन बन गया है। उपर्युक्त तीनों प्रणालियां मानव के लिए देन होने के स्थान में अभिशाप सिद्ध हो रही है। आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य के जीवन का लक्ष्य श्रेष्ठ बने। जिससे मनुष्य अपनी सृजना को गौरवान्वित कर सके। सबसे बड़ी गड़बड़ मानव की भावना में स्वार्थ वृत्ति के आ जाने से तथा मनुष्य जीवन की उपयोगिता और महत्त्व को न समझने के कारण हुई। पतन का अनुपात विलासिता की आसक्ति के अनुपात में होता है। मनुष्य के स्वार्थी तथा विलासी होने से उसका पतन होता है। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वह बुरे से बुरे कार्य करने के लिए प्रवृत्त हो जाता है। आज विलासिता और भोगवाद के कारण हमारी संस्कृति भोग प्रधान बन गई है। परमात्मा का डर उसके हृदय से निकल गया, मनुष्य परमात्मा के नियमों की उपेक्षा करके उसे चुनौती देने लग गया। ऐसी अवस्थाओं की कल्पना से भयभीत होकर ही दूरदर्शी तत्त्ववेत्ता यह कहने के लिए बाध्य हुआ कि यदि संसार में ईश्वर न भी होता तो संसार की सुख और शान्ति के लिए उसका आविष्कार करना पड़ता। आज मनुष्य ज्ञान-विज्ञान, कला कौशल, उद्योग-धन्धों, संगठित संस्थाओं, प्रणालियों आदि की दृष्टि से नियन्त्रित और सुव्यवस्थित है। परन्तु प्रश्न यह है कि मनुष्य के ज्ञान का क्या प्रयोग हो रहा है? वह क्या बना हुआ है और क्या कर रहा है। इस प्रश्न का उत्तर बड़ा निराशाजनक है। वह तो अपने निम्नस्तर पर पहुँचा दिखाई देता है। यदि वह अपने ज्ञान-विज्ञान, धन-ऐश्वर्य और कला-कौशल को उच्चतम स्तर की ओर प्रेरित करता तो वह निश्चय ही उन्नति की ओर अग्रसर होता। प्रत्येक मनुष्य में गुण और अवगुण दोनों होते हैं। श्रेष्ठ मनुष्य सदैव मनुष्य के उज्जवल पक्ष को सामने रखते हैं, उससे प्रकाश ग्रहण करते हैं और उसका आदर करते हुए अपने साथ उन मनुष्यों की तथा समाज की उन्नति में सुन्दर योग दिया करते हैं जिन मनुष्यों को हम बुरा और पतित कहते हैं। इसलिए श्रेष्ठ मनुष्य को अगर किसी में कोई बुराई नजर आती है तो उससे घृणा करने के बजाय सही मार्ग पर लाने का प्रयत्न करें, उन्हें सदाचार की शिक्षा दें ताकि वे भी अपने जीवन को उन्नत बना सकें। इन्द्रियों के मन के अधीन, मन के बुद्धि के अधीन और बुद्धि के आत्मा के अधीन होने से मनुष्य का विकास और नियन्त्रण होता है। इस प्रकार के विकास के फलस्वरूप मनुष्य सुन्दरता की अनुभूति का आनन्द उठाता, सत्य से प्रेम करता, बुराई से घृणा करता, सत्कर्म में प्रवृत्त हुआ जीवन को उन्नत बनाता है।

इस संसार से विदा होते समय मनुष्य के साथ कोई वस्तु नहीं जाती केवल उसके द्वारा किए पुण्य कर्म ही साथ देते हैं। आने वाली पीढ़ियों के उपकार के लिए मनुष्य जो श्रेष्ठतम सम्पदा छोड़ता है वह उसकी सच्चरित्रता और पुण्य कर्म होते हैं। मनुष्य अपने चरित्र के बल पर संसार को मार्ग दिखा सकता है। मनुष्य का उत्तम जीवन चरित्र प्रकाश स्तम्भ के समान है जो मार्ग से भटके हुए लोगों को सन्मार्ग पथ दिखा सकता है। संसार में जितने भी महापुरूष हुए हैं उनकी महानता का प्रमाण उनका उच्च तथा आदर्श चरित्र था। आदर्श जीवन चरित्र वाला मनुष्य अपने जीवन के चिन्ह उसी प्रकार छोड़ जाता है जिस प्रकार रेत पर चलने से पीछे मनुष्य के पदचिन्ह रह जाते हैं। इसलिए अगर हम अपने जीवन को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें अपने जीवन को उज्जवल तथा आदर्श चरित्र से युक्त बनाना होगा।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

वर्ष 2015 के नए कैलेण्डर मंगवाएं

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा प्रति वर्ष हजारों की संख्या में नव वर्ष के कैलेण्डर महर्षि दयानन्द के चित्र के साथ देसी तिथियों सहित छपवाए जाते हैं। गत कई वर्षों से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब वैदिक साहित्य आधे मूल्य पर आर्य जनता को उपलब्ध करवा रही है। इंसी प्रकार सन् 2015 के महर्षि दयानन्द सरस्वती के चित्र वाले कैलेण्डर भी आधे मूल्य पर आर्य जनता को दिए जाएंगे। पिछले वर्ष की भान्ति इस वर्ष भी कैलेण्डर का मूल्य चार रुपये प्रति तथा 400 रुपए सैकडा रखा गया है। इसलिये सभी आर्य समाजें, शिक्षण संस्थाएं व आर्य बन्धु शीघ्र अति शीघ्र कैलेण्डर सभा कार्यालय से मंगवा कर अपने सदस्यों व इष्ट मित्रों में वितरित करें। कार्यालय का समय प्रात: 10.00 बजे से सायं 5 बजे तक है। रविवार को अवकाश रहता है इसलिये समय पर अपना व्यक्ति भेज कर कैलेण्डर मंगवाएं।

-प्रेम भारद्वाज सभा महामंत्री

thearyasamaj.org

वेदों का एक ही सिद्धान्त सब अन्धविश्वासों को समाप्त करने में पर्याप्त

-ले० खुशहाल चन्द्र आर्य गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स, 180 महात्मा गांधी रोड कोलकत्ता

वैदिक धर्म में सौ नहीं दो सौ नहीं सहस्त्रों सिद्धान्त हैं जो बुद्धि, तर्क व विज्ञान की कसौटी पर खरे उतरते हैं यानि वेदों के सभी सिद्धान्त बुद्धि संगत हैं। अन्य सभी मत, पंथ, सम्प्रदायों को सर्वव्यापक यानि सृष्टि के कण-कण में उपस्थित है तथा सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अजर, अमर व अजन्मा मानता है, जब कि अन्य मत, पंथ व सम्प्रदाय ईश्वर को कोई सातवें आसमान पर, कोई चौथे आसमान पर मानता हैं, तो शैव अपने ईश्वर शिव को कैलाश पर्वत पर मानता है तो वैष्णव अपने विष्णु को क्षीर सागर में एक कमल के फूल पर लेटे हुए मानता है, तो कोई अपने आराध्य देव को बैकुण्ठ में बैठा मानता है। पर ये सब निराधार हैं कारण एक स्थान पर बैठ कर ईश्वर पूरी सृष्टि को नहीं देख सकता और न ही सभी जीवों के कार्यों को देख कर, उनके किये हुए अच्छे या बुरे कर्मों का फल, अच्छे कर्मों का फल सुख के रूप में तथा बुरे कर्मों का फल दु:ख के रूप में नहीं दे सकता। इसलिए पूरी सृष्टि के रचियता परमात्मा कभी भी एक स्थान पर बैठा नहीं रह सकता। उसको सर्वव्यापी, सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान मानना ही पड़ेगा जिसे वैदिक धर्म मानता है। ईश्वर का कभी जन्म नहीं हो सकता कारण वह जन्म-मरण के बन्धन से परे है, इसीलिए वह अजन्मा, अजर व अमर कहलाता है। जन्म लेने वाला प्राणी कभी भी सर्वव्यापक नहीं हो सकता।

वेद, ईश्वर को सर्वशक्तिमान व न्यायकारी मानता है। वह कठिन से कठिन कार्य में भी किसी दूसरे का सहारा व सहयोग नहीं लेता, वह स्वयं सब काम करता है। जब कि हमारे ईसाई भाई ईसा मसीहा को गॉड (ईश्वर) का एकलौता बेटा मानते है और ईसा में विश्वास रखने वाले को, ईसा गॉड से सिफारिश करके अपने भक्त के सब पापों को धुलाकर उसको पूर्ण सुखी बनाता है चाहे उसके कर्म कितने भी बुरे हों, ऐसे ईश्वर को आप कैसे न्यायकारी व सर्वशक्तिमान कह सकते हैं ? ऐसे ही हमारे मुस्लिम भाई, मोहम्मद साहब को खुदा (ईश्वर) का पैगम्बर यानि दूत मानते हैं। उनका भी यही मत है जो मोहम्मद साहब को खुश कर लेगा, खुदा भी उसके ऊपर खुश हो जायेगा और उसे जन्नत (स्वर्ग) में भेज देगा। चाहे उसके कर्म कैसे भी घिनौने हों। इसी प्रकार हमारे पौराणिक भाई भी किसी से पीछे नहीं। वे भी किसी देवता की भक्ति चाहे वह राम हो, कृष्ण हो, हनुमान हो और चाहे दुर्गा हो या काली हो किसी की भक्ति करने से ही स्वर्ग मिल सकता है। ईश्वर की सीधी स्तुति, प्रार्थनोपासना करना कोई नहीं बतलाता। जब ईश्वर अपने किसी काम में भी किसी दूसरे का सहयोग नहीं लेता, वह अपनी न्याय-व्यवस्था से स्वयं ही सब काम करता है तो फिर किसी एकलौता पुत्र, पैगम्बर या किसी देवता को बीच का सहयोगी मानता, यह मनुष्य की अज्ञानता ही कहलाई जायेगी।

वेदों का एक प्रमुख सिद्धान्त यह है कि मनुष्य प्रकृति के विरुद्ध कभी कोई काम नहीं कर सकता। जैसे मनुष्य आँखों से देखता है और कानों से सुनता है। यदि कोई यह कहे कि फलां मनुष्य कानों से देखता है और आँखों से सुनता है, यह प्रकृति नियम के विरुद्ध होने से इसे सत्य मत मानो। इन असत्य और असम्भव बातों को, सत्य मानने वाले इन बातों को चमत्कार का रूप दे देते हैं। और कहते हैं कि यह पहुँचा हुआ सन्त या सन्यासी है, यह ऐसे चमत्कार कर सकता है। किसी ने कहा कि एक पहुँचे हुए सन्यासी को मैंने एक ही समय में कलकत्ता, मुम्बई, दिल्ली, मद्रास और अहमदाबाद पाँच जगह देखा। यह प्रकृतिक नियम के विरुद्ध है कारण एक व्यक्ति एक ही समय में एक ही स्थान पर रह सकता है। यदि कोई कहे तो उसे मिथ्या समझें। वर्तमान के सभी मत, पंथ व सम्प्रदाय इन चमत्कारों के आधार पर ही अपने-अपने मत को सब से अच्छा बतलाते हैं और एक से एक मनघड़न्त बात जोड़ कर अपने मत की महानता सिद्ध करते हैं। जैसे ईश्वरीय नियम है कि जो जीव जैसा कर्म करेगा उसको वैसा ही फल मिलेगा परन्तु ईसाई भाई कहते हैं कि आप ईसा की शरण में आ जाओ तो गॉड (ईश्वर) आपके सब पाप माफ कर देंगे। यह ईश्वरीय नियम के विरुद्ध है इसलिए असम्भव है। इसी प्रकार मुस्लिम भाई भी कहता है कि तुम मोहम्मद साहब को खुश कर दो तो खुदा भी तुम्हें मोहम्मद साहिब के कहने से जन्नत में भेज देगा चाहे तुमने कितने भी पाप किये हों। यही बात हमारे सनातनी भाई भी कहते हैं कि आप मन्दिर के दिन में दो बार दर्शन कर लो, आपको ईश्वर हर काम में सफलता देगा चाहे आप दिन भर कितना भी पाप करते रहो। वैदिक-धर्म ही एक ऐसा है जो अच्छे काम का फल अच्छा और बुरे काम का फल बुरा ही ईश्वर देता है, ऐसा मानता है। ईश्वर अपने बनाए नियमों के प्रतिकूल न तो कोई काम करता है और न ही कर सकता है। कारण ईश्वर भी अपने नियमों में बन्धा हुआ है। ऐसी सच्ची बात वैदिक धर्म ही कह सकता है, अन्य मतों में इतनी सच्ची बात कहने की ही हिम्मत नहीं। इसलिए हर व्यक्ति को वैदिक धर्म अपनाना चाहिए और ईश्वरीय ज्ञान वेदों के अनुसार चल कर अपने जीवन को सफल व शान्तिमय बनाते हुए मोक्ष मार्ग की ओर अग्रसर होना चाहिए।

वैसे सृष्टि नियम के विरुद्ध चमत्कारिक बातें सभी मतों में हैं, जैसे मुस्लिम भाई कहते हैं कि हमारा पैगम्बर मोहम्मद साहब ने एक अँगुली से चान्द के दो टुकड़े कर दिये, परन्तु हमारे पुराणों में सब से अधिक चमत्कारिक बातें हैं। जैसे हनुमान जी ने अपने बचपन में ही सूर्य को अपने मुख में रख लिया, कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अपनी चिटली अँगुली से उठा लिया। कृष्ण ने द्रौपदी का चीर बढ़ा दिया आदि। भूत-प्रेत, गण्डा-डोरी, श्राद्ध-तर्पण, फलित ज्योतिष, ग्रहों का नाराज व खुश होना तथा मूर्ति पूजा व अवतार वाद को मानना अन्ध विश्वास व पाखण्ड हैं कारण ये सब बातें प्रकृति नियम के विरुद्ध है। इसलिए इनको न मान कर वैदिक धर्म को मानना ही हर व्यक्ति के लिए श्रेयस्कर व लाभदायक होगा।

वैदिक धर्म के ईश्वर के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करने के लिए सन्ध्या करना, दुषित वातावरण को शुद्ध करने के लिए हवन करना, शरीर को स्वस्थ रखतें हुए यम-नियमों से समाधि तक पहुँचने के लिए अष्टांग योग करना, दूसरों की भलाई के लिए परोपकार करना तथा वेदों सहित सभी आर्य ग्रन्थों को पढ़ना और उनके अनुसार जीवन बनाना आदि मुख्य सिद्धान्त हैं जो तर्क, बुद्धि व विज्ञान संगत कर्म हैं, जो मनुष्य को स्वस्थ रखते हुए सुखी जीवन बनाने में पूर्ण सहायक हैं। इसलिए यदि हम अपने जीवन को स्वस्थ रखना चाहते हैं तो हमें अन्य मतों व पंथों को छोड़कर वैदिक धर्म को अपनाना चाहिए जिससे हम अपने परिवार, समाज, राष्ट्र व केवल मानव-मात्र ही नहीं बल्कि प्राणी-मात्र के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए अपने जीवन को सफलता की ऊँचाईयों को छूते हुए मोक्ष के अधिकारी बने। इससे उत्तम अन्य कोई मार्ग नहीं।

आर्य समाज मोहल्ला जालन्धर में गायत्री महायज्ञ

आर्य समाज मोहल्ला गोबिन्दगढ़ जालन्धर में हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी माघ मास का गायत्री महायज्ञ 14 जनवरी 2015 से 15 फरवरी 2015 रविवार तक बड़ी श्रद्धापूर्वक मनाया जा रहा है। इस महायज्ञ में पवित्र गायत्री महामन्त्र के द्वारा विश्व शांति के लिए आहुतियां प्रदान की जाएंगी। कार्यक्रम का समय 14 जनवरी बुधवार को प्रात: 7:00 से 8:30 बजे तक होगा तथा 15 जनवरी से 15 फरवरी तक दोपहर 3:00 से 5:00 बजे तक होगा। सभी धर्मप्रेमी सज्जनों माताओं से प्रार्थना है कि सपरिवार इष्ट मित्रों सहित अधिक से अधिक यज्ञ में पधारें और यथाशक्ति सहयोग देकर यज्ञ को सफल बनाएं।

-राज कुमार गुप्ता उपमन्त्री आर्य समाज

thearyasamaj.org

ईश्वर सर्वज्ञ है और जीवात्मा अल्पज्ञ है

-ले० मनमोहन कुमार आर्य 196 चुक्खूवाला-2 देहरादून

आजकल मनुष्य का जीवन इतना व्यस्त हो गया है कि स्वाध्याय के लिए समय मिलना कठिन हो गया है। कई दैनिक कर्तव्य मनुष्य चाहकर भी पूरे नहीं कर पाता हैं। ऐसी स्थिति में ईश्वर क्या है, कैसा है तथा जीवात्मा का स्वरूप कैसा है, इसको जानने की किसी को न इच्छा होती है न फुर्सत ही है। इसके दूसरी ओर हमारे ग्रामीण, अशिक्षित व अल्प शिक्षित व नगरीय बन्धुओं में भी धार्मिक भावनाओं की भूख भरी पड़ी है जिस कारण कुछ चालाक व कपटी लोग उन्हें अपना शिष्य या अनुयायी बना लेते हैं। वहां गुरुओं द्वारा उन्हें अपने गुरु में अन्ध-श्रद्धा रखना सिखाया जाता है और हमें लगता है कि उनके सत्संगों में जाना और वो जो कहें उसे सुनना ही उनका धर्म बन जाता है। मैं कौन हूं ? इस प्रश्न का शास्त्रीय व सही उत्तर उन्हें वर्षों तक गुरुओं की सेवा सुश्रुषा करने पर भी नहीं मिलता है। यह बात और है कि यह उत्तर कठिन नहीं अपितु सरल है, परन्तु सत्य ज्ञान देने से आजकल के गुरुओं का छद्म प्रयोजन पूरा नहीं होता। यहां इतना कहना भी अभीष्ट है कि हम और सभी प्राणी एक जीवात्मा हैं जो अति सूक्ष्म चेतन तत्व हैं। यह जीवात्मा अनादि, अनुत्पन्न, अविनाशी अमर, कर्मानुसार नाना योनियों में जन्म लेने वाला, कर्मानुसार सुख व दुख का उपभोग करने वाला तथा वेदानुसार सद्कर्मों वा सद्धर्म का पालन कर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को सिद्ध कर 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों का मुक्ति का सुख भोगने वाला है। हमें अपने जीवन से जुड़े सभी आध्यात्मिक व सामाजिक प्रश्नों का उत्तर महर्षि दयानन्दकृत सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ से मिल सकता है।

आज के इस लेख में हम ईश्वर के एक गुण, सर्वज्ञता पर विचार कर रहे हैं। सर्वज्ञ का अर्थ है कि सब कुछ जानने वाला। ईश्वर के इस गुण व इसके साथ अन्य कुछ गुण व शक्तियों के कारण ही वह इस संसार को बनाता, चलाता, प्रलय करता और पुनः सृष्टि की रचना करता है। यदि ईश्वर में सर्वज्ञता का गुण न होता तो यह संसार बन ही नहीं सकता था। हमारे वैज्ञानिक छोटे से छोटा आविष्कार करते हैं तो उसमें बौद्धिक ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। उस ज्ञान को बहुत से शिक्षित लोग भी जान व समझ नहीं पाते। हम लोग तो बिना सिखाये उन आविष्कृत वस्तुओं का प्रयोग भी नहीं कर पाते। जिस प्रकार एक साईकिल तक चलाने के लिए कई बार अभ्यास करना पड़ता है और उसको चलाना सिखाना पड़ता है, उसी प्रकार से ईश्वर भी वैज्ञानिकों की भांति अपने सर्वज्ञ ज्ञान से इस संसार की रचना करता है। ईश्वर के ज्ञान की यदि बात करें तो संसार के सभी वैज्ञानिक मिल कर भी इतना ज्ञान नहीं रखते जितना ईश्वर अकेला रखता है। यही कारण है कि वैज्ञानिकों ने कृत्रिम पदार्थ तो अनेक बना लिये हैं परन्तु मनुष्य के शिर का बाल या एक नाखून तक का वह आविष्कार नहीं कर सके जो ईश्वर के बनाये बाल व नाखून के पूरी तरह से समान हो। इस सर्वज्ञ ज्ञान होने के कारण ईश्वर ने सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, पृथिवीस्थ सभी पदार्थ, मनुष्यों व इतर प्राणियों के शरीर आदि बनाये हैं और सर्वज्ञता के ज्ञान से ही वह सारे संसार का संचालन आदर्श रूप में कर रहा है। ईश्वर सर्वज्ञ होने से सृष्टि के बारे में हर प्रकार का ज्ञान रखता है और इसके अतिरिक्त अपनी सर्वव्यापकता, अनादिता, नित्यता, सर्वशक्तिमानत्व, आनन्द-स्वरूप होने के कारण वह सत्य, रज व तम गुणों वाली सूक्ष्म जड़ कारण रूप प्रकृति से सृष्टि को बनाता है। अतः ईश्वर की सर्वज्ञता उसके सर्वव्यापकत्व के गुण पर भी मुख्यतः निर्भर है। यदि वह सर्वव्यापक न होता तो वह सर्वज्ञ कदापि नहीं हो सकता था। क्योंकि एकदेशी अर्थात् एक स्थान पर रहने वाली सत्ता को अपने अन्दर व इर्द-गिर्द का भी ज्ञान होना ही सम्भव है, अपने से दूर व सूदूरस्थ स्थानों का ज्ञान नहीं हो सकता। इसको इस प्रकार से भी समझ सकते हैं कि हमें नेत्र इन्द्रियों से वस्तुओं का दर्शन होता है। नेत्र हमारे शिर में सामने की ओर हैं। अतः हम आगे कुछ दूर की वस्तुओं को ही देख सकते हैं, बहुत दूर व अनन्त दूरी पर स्थित वस्तुओं को नहीं। हम बिना घूमें अपने पीछे की पास की 2 वस्तुओं को भी नहीं देख पाते। एकदेशी जीवात्मा का यह ज्ञान अल्पज्ञ कहलाता है। मनुष्य का जीवात्मा एकदेशी है, अतः इसका ज्ञान भी सर्वज्ञ न होकर अल्पज्ञ है। अपने अल्पज्ञ ज्ञान को वह ईश्वरोपासना, वेदादि शास्त्रों का अध्ययन, माता-पिता-आचार्य व समाज के ज्ञानी पुरूषों की संगति कर अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकता है परन्तु वह ज्ञान वृद्धि एक सीमा तक ही होती है। सर्वज्ञता की स्थिति जो ईश्वर को प्राप्त है, वह स्थिति जीवात्मा को कभी भी प्राप्त नहीं हो सकती।

इस लेख में हमने यह जाना है कि ईश्वर के अनन्त गुणों में से एक गुण है सर्वज्ञता। जीवात्माओं में यह गुण ईश्वर से अतिन्यून अल्पज्ञता के रूप में विद्यमान है। ईश्वर के इस गुण में उसका सर्वव्यापक होना भी एक महत्वपूर्ण कारण है। यदि ईश्वर सर्वव्यापक न होता तो उसमें यह गुण नहीं हो सकता था। यह भी महत्वपूर्ण तथ्य है कि ईश्वर का यह गुण अनादि व नित्य है और हमेशा-हमेशा उसके साथ रहेगा। यह ईश्वर का स्वाभाविक गुण है। स्वाभाविक गुण हमेशा अपने गुणी के साथ रहते हैं। ईश्वर यदि चाहे भी तो इसका त्याग नहीं कर सकता। यद्यपि यह प्रश्न निरर्थक है कि क्या कभी ईश्वर ऐसा चाह सकता है। ईश्वर की उपासना में इस गुण सर्वज्ञता का चिन्तन करने से उपासक को लाभ मिलता है। उपासना में ईश्वर से संगति होती है और सर्वज्ञता का चिन्तन करने से जीवात्मा की अल्पज्ञता में गुण-वर्धन होता है। यह गुण वर्धन यहां तक होता है कि वह ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानकर उसमें स्थित व स्थिर हो जाता है। यह स्थिति सिद्ध योगियों को ही प्राप्त होती है। इसका अभ्यास कोई साधारण से साधारण मनुष्य भी कर सकता है। हमारे गुरुकुलों व आर्यसमाजों में उपासना सिखाई जाती है। महर्षि दयानन्द ने इसके लिए उपासना विषय पर सन्धया पद्धति नाम की पुस्तक भी लिखी है। उसको पढ़कर उपासना के क्षेत्र में प्रवृत्त हुआ जा सकता है। उपासना में नैरन्तर्यता से ध्यान स्थिर होता है और ध्यान की स्थिरता से वह स्थिति प्राप्त होती है जो जीवन का लक्ष्य है। इस स्थिति को समाधि कहा जाता है। समाधि में ईश्वर जीवात्मा या उपासक अथवा योगी को अपने सत्य स्वरूप का निभ्रान्त ज्ञान कराता है जिससे योगियों के सभी संशयों की निवृत्ति हो जाती है। ईश्वर के स्वरूप का यह प्रकाश कुछ इसी प्रकार का होता है जिस प्रकार से एक स्त्री अपने स्वरूप का प्रकाश अपने पति के सम्मुख करती है। समाधि में होने वाला ईश्वर के स्वरूप का प्रकाश इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि जैसे कोई सच्चा गुरु अपने समस्त ज्ञान का प्रकाश अपने शिष्य पर करता है और उससे उम्मीद करता है कि वह उस ज्ञान को आगे बढ़ाये। महर्षि दयानन्द के गुरु दण्डी स्वामी विरजानन्द ने भी अपने समस्त ज्ञान का प्रकाश महर्षि दयानन्द पर किया और उनसे अनुरोध किया कि वह चाहते हैं कि दयानन्द जी उनसे प्राप्त अपने समस्त ज्ञान का प्रकाश सारे देश व विश्व की जनता को करायें। इसी प्रकार से ईश्वर सिद्ध योगी व उपासक पर अपने स्वरूप व ज्ञान का प्रकाश कर देता है। जो लोग उपासना करते हैं और उन्हें योग की सिद्धियां प्राप्त हैं, वह चाहे किसी मत के अनुयायी हों, उनका पुनीत कर्त्तव्य है कि वह उस ज्ञान से देश की जनता को लाभान्वित करें। यदि वह ऐसा नहीं करते तो यह उनकी स्वार्थ की प्रवृत्ति व अज्ञान ही कहा जा सकता है। हम समझते हैं कि ईश्वर के सर्वज्ञ होने व जीव के अल्पज्ञ होने का कुछ ज्ञान पाठकों को हो गया होगा। हम अनुरोध करते हैं कि सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों का निरन्तर स्वाध्याय वा अध्ययन कर इस विषय व अनेक आध्यात्मिक व सामाजिक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर पाठक अपने जीवन को सफल बनाये।

thearyasamaj.org

दक्षिणायन और उत्तरायण और हमारे प्रेरक पर्व

-ले० आचार्य दीनानाथ सिद्धान्तलंकार

छान्दोग्य उपनिषद् द्वितीय प्रपाठक खण्ड 11 से 20 तक के सन्दर्भ में चाक्रायण ऋषि ने अपने शिष्यों को 11 व्रतों का उपदेश दिया है। इसमें छठा व्रत इस प्रकार है-'ऋतून् न निन्देत् तत् व्रतम्' 'ऋतुओं की निन्दा न करे, यह व्रत है।' विश्व में भारतवर्ष ही एक ऐसा अनोखा और उत्कृष्ट देश है जिसमें, मुख्यत: चार ऋतुएं होती हैं। वैशाख से वर्ष का आरम्भ मानकर क्रमश: ग्रीष्म, वर्षा, शरत् और वसन्त का ऋतु-चक्र अनवरत चलता रहता है। यह चक्र सूर्य की दो प्रकार की गति पर आधारित है जिसे 'अयन' कहा जाता है। इसके दो मुख्य भाग हैं-दक्षिण और उत्तर। बसन्त ऋतु से उत्तरायण और शरत् ऋतु से दक्षिणायन प्रारम्भ होता है और प्रत्येक 'अयन' के अन्तर्गत तीन-तीन मास हैं। जैसे-1. ग्रीष्म ऋतु में वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ 2. वर्षा ऋतु में-श्रावण, भाद्रपद, आश्विन 3. शरत् ऋतु में-कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष। 4. बसन्त ऋतु में-माघ, फाल्गुन, चैत्र। दो-दो मास की दृष्टि से वर्ष को बहुधा 'षड् ऋतुचक्र' में भी बांटा जाता है, जैसे 1. बसन्त में-फाल्गुन-चैत्र। 2. ग्रीष्म ऋतु में : वैशाख, ज्येष्ठ। 3. वर्षा ऋतु में-आषाढ़-श्रावण। 4. शिशिर में-भाद्रपद, आश्विन। 5. शरद् में-कार्तिक, मार्गशीर्ष 6. हेमन्त में-पौष, माघ।

प्रत्येक ऋतु का स्वागत

कुछ लोगों की आदत होती है कि सर्दी के इस मौसम की निन्दा करते हुए गर्मी की प्रशंसा और दूसरी ओर गर्मी में उसे बुरा बताते हुए सर्दी का गुणगान करते हैं। इसके विपरीत वेद का उपदेश है कि प्रत्येक ऋतु में मानव को प्रभु के इस सृष्टि चक्र, उसका धन्यवाद करते हुए उस ऋतु के अनुकूल अपने जीवन के अहोरात्र का कार्यक्रम चलाना चाहिए। वेद का निम्न मन्त्र जीवन के प्रति कितना प्रेरक मार्गदर्शन करता है-

वसन्त इन्नु रन्त्य: ग्रीष्म इन्नु रन्त्य:।

वर्षाण्यनु शरदो हेमन्त: शिशिर इन्नु रन्त्य:।

साम. पू. ६३।१३२

मैं वसन्त में रमण करने वाला-मस्त रहने वाला बनूं, ग्रीष्म, शरद, हेमन्त और शिशिर में भी सदा हर्षयुक्त और आनन्दित रहूं। यजुर्वेद के निम्न मन्त्र में इस ऋतुचक्र और यज्ञ चक्र में कैसा भावपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया गया है-

यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञ मतन्वत्।

बसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म: शरद्धवि:। ३१।१४

उस महान् दिव्य शक्ति की प्रेरणा से इस सृष्टि में एक विशाल यज्ञ अनवरत चल रहा है। इस यज्ञ का आज्य होम सामग्री द्रव्य के रूप में बसन्त ऋतु समिधा के रूप में ग्रीष्म और हवि घृत के रूप में शरद् ऋतु है। श्री कृष्ण ने गीता के दूसरे अध्याय में ऋतु वर्णन सहित विश्व में प्रति क्षण हो रहे 'यज्ञचक्र' का ही प्रभावी शब्दों में अर्जुन के सम्मुख वर्णन किया है।

पौष का अन्त: माघ का प्रारम्भ

30 तिथि पौष मास की समाप्ति होती है और माघ का प्रारम्भ मकर सक्रान्ति के नाम से देशव्यापी मंगल पर्व के रूप में प्रयाग में त्रिवेणी संगम तीर्थ, कलकत्ता के पास गंगासागर, हरिद्वार, ऋषिकेश, गढ़मुक्तेश्वर, मध्य प्रदेश में नर्मदा, उज्जैन, महाराष्ट्र में नासिक, बिहार में पटना, मद्रास में कुम्भकोणम्, रामेश्वरम्, केरल में कन्या कुमारी इत्यादि समूचे भारत में किसी न किसी प्रकार के प्रमुख त्योहार सदृश सम्पन्न किया जाता है।

पौष-पितृयान: माघ-देवयान: पौष मास का अन्तिम दिवस 30 तिथि 13 जनवरी उत्तर भारत में-विशेषत: पंजाब, हिमाचल, जम्मू कश्मीर, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के पश्चिमी ज़िलों में 'लोहड़ी' नाम के त्योहार से सोत्साह मनाया जाता है। शीत ऋतु की द्योतक पौष-मास की अन्तिम रात्रि शीतकाल के साथ विदा होती है और प्रात: माघ मास के प्रथम सूर्योदय के साथ वसन्त ऋतु का आगमन होता है जिसके साथ फाल्गुन और चैत्र दो मास मिलकर तीन मास का समन्वय हो जाता है। पौष मास के बाद सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण में प्रविष्ट होता है। आध्यात्मिक दृष्टि से उत्तरायण को शास्त्रों में देवयान और दक्षिणायन की पितृयान कहा जाता है। महाभारत की कथा के अनुसार भीष्म पितामह 6 मास तक रणशय्या पर पितृयान होने से रणभूमि में ही अपने दीर्घ जीवन के अनुभवों से पांडवों सहित समस्त जनता को धर्म उपदेश देते रहे जो 'महाभारत' में 'शान्ति पर्व' के नाम गीता सदृश मोक्ष मार्ग प्रेरक है। पौष मास की समाप्ति और माघ की प्रात: सूर्य के उत्तरायण में प्रवेश करते ही भीष्म पितामह ने लगभग 200 वर्ष की आयु में स्वेच्छा से प्राण त्याग किया।

यह भयंकर शीत

संस्कृत कवियों ने प्रबल शीत ऋतु के इस पौष की भरपूर निन्दा की है। अन्योक्ति अलंकार के साथ। एक कवि के शब्द नमूने की रूप में-

द्वारं गृहस्य पिहितं शयनस्य पार्श्वे।

वह्नि ज्वलति उपरि तूल परोगरीयान्।

शीतमासं भयादिव

रविर्याति सिन्धो: कृशानु:।

शीतैर्भीता इव दिवसा: साम्प्रतं संकुचयन्ति।

अर्थात् रात को सोने के कमरे का द्वार बन्द है, पास में अग्नि प्रज्वलित रहती है, शरीर पर रूई के भारी कपड़े हैं। इस सर्दी के डर से सूर्य भी समुद्र की गोद में जा रहा है और इसी शीत के भय से दिन भी छोटे हो रहे हैं। एक अन्य संस्कृत कवि के अनुसार-दरिद्र की निरर्थक आशाओं और कंजूस की तृष्णा के समान पौष मास की यह रात्रि समाप्त होने को ही नहीं आती।

पौष मास की वर्षा

इतनी कड़ी सर्दी में जब आकाश मेघा क्रान्त हो वृष्टि की अजस्र धाराओं से भूमि को आप्लावित कर देता है, तब करेला नीम चढ़ा जैसी स्थिति पैदा हो जाती है। मध्यवित्त नागरिक हो ढेरों गर्म कपड़ों और दफ्तर व घरों को 'इलैक्ट्रिक हीटरों' से इस शीतयुद्ध का प्रतिरोध कर लेते हैं, पर नगरों की वह निर्धन, निराश्रित, निर्वस्त्र, अनिकेत जनता-जिसकी एक मात्र छत नगरों और यातायात के लिए बने पुलों व इसी प्रकार के वर्षा की बौछारों व अर्धजलप्लावित ठिकानों में छोटे, बड़े पुलिस सिपाहियों के डंडों की भी परवाह न करते हुए, रात को टांगे सिकोड़े और दिन में सूर्य की किरणों की उत्सुक प्रतीक्षा में ही अपनी आयु के दिन गिनती के साथ काटते हैं। पर इस स्थिति के सर्वथा विपरीत देहात के किसान के पौष-माघ की वर्षा का प्रत्येक बिन्दु अमृत कण तुल्य होता है। अच्छी फसल की आशाओं का पुलन्दा सिर पर बांधे वह अपने सारे बाल-बच्चों के साथ खेत में हल चलाता और विविध खाद्य पदार्थों के बीज बिखेरता रहता है।

पर स्वास्थ्य की दृष्टि में पौष मास को सर्वोत्तम माना गया है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार पुष पोषण धातु से पौष शब्द बनता है, अर्थात् पुष्टिदायक मास जठराग्नि प्रदीप्त होने से जहां भूख खूब लगती है, वहां कोई पौष्टिक फल-मेवे इत्यादि ऋतु में सुलभ होते हैं। दिन छोटे, सूर्योदय लगभग 6-30 और अस्त लगभग 5.30 होता है। शीत अपने यौवन पर समूची प्रकृति को अपने बाहुपाश में आबद्ध हाथ पैर जाड़े से कंपित और मुंह के श्वास-प्रश्वास भी धूममिश्रित।

शीत ऋतु में चार 'त' का प्रयोग-इस ऋतु में स्वास्थ्य रक्षा और शारीरिक पुष्टि के लिए चार 'त' का प्रयोग करना चाहिए। लोकोक्ति के अनुसार-शीत शिशिर हेमन्त का हुआ परम प्रधान तेल, तूल, तिल तपन का सब जग में है मान॥ इस कड़ाके की शीत के वाहक पौष मास को 'अलविदा' कहने के लिए उत्तर भारत के शीत प्रधान पांच प्रदेश-पंजाब, हरियाणा, हिमाचल, जम्मू कश्मीर और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पौष मास के अन्तिम दिवस 30 तिथि 13 जनवरी को रागरंग का, स्वस्थ आमोद-प्रमोद, पारिवारिक-सामाजिक मिलन का त्योहार मनाया जाता है जिसका प्रचलित नाम लोहड़ी है। इसके अगले दिन ही माघी-माघ मास के प्रथम दिवस 'मकर सक्रान्ति' का हर्ष उल्लास के साथ लगभग समूचे देश में 'खिचड़ी का पर्व' नाम से मनाया जाता है। (शेष पृष्ठ 7 पर)

thearyasamaj.org

हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंद बलिदान दिवस

आर्य समाज मन्दिर कमालपुर होशियारपुर में हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंद जी को एक विशेष सभा को आयोजित कर नमन किया गया। इस अवसर पर दिनांक 28.12.2014 (रविवार) को प्रातः 10.00 बजे आर्य जनों के समूह में कार्यक्रम चला। इससे पूर्व साप्ताहिक हवन यज्ञ में आस्ट्रेलिया गोल्डकोस्ट से पधारे डॉ. रवि रौली और डॉ. मोनिका वालिया सपत्नी एवं पटियाला से पधारे कैप्टन पवन नरूला और श्रीमती दिव्या नरूला सपत्नी ने अपने परिवार व बच्चों सहित यज्ञ की शोभा को बढ़ाया। नगर से पधारे आर्य नर-नारियों ने सामूहिक रूप में आहुतियां डाली। यह आकर्षक दृश्य देखते ही बनता था।

तत्पश्चात् ''दयानन्द हाल'' में कार्यक्रम चला। मंच से महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और स्वामी श्रद्धानन्द के जय जय कार से कार्यक्रम आगे बढ़ा। मन्त्री प्रो. यशपाल वालिया ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन की कुछ घटनाओं पर प्रकाश डाला। आचार्य भद्रसेन ने विदेश से आये परिवार को साधुवाद दिया और उन्हें आर्यत्व की पहचान बनाये रखने के लिये प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि जीवन को सार्थक बनाने के लिये आर्य समाज की ज्योति को देश व विदेश में फैलाये रखना आज जरूरी बन गया है। गोल्डकोस्ट आस्ट्रेलिया से पधारे डॉ. रवि रौली ने सभी उपस्थित आर्य जनों और विद्वानों का धन्यवाद किया और कहा कि यहां आकर एक विशेष प्रकार की प्रसन्नता हुई और वे और उनका परिवार गौरवान्वित हुआ। उन्होंने आगे कहा कि विदेश में भी आर्य समाज का प्रचार होता है और साप्ताहिक हवन यज्ञ होते हैं, विशेष अवसर पर कार्यक्रम चलते हैं। वहां फिज़ी देश से आकर बसने वाले आर्यजन बहुत दिलचस्पी दिखाते हैं। कैप्टन नरूला ने अपनी और अपने परिवार की ओर से सभी उपस्थित जनों का धन्यवाद किया। आर्य समाज होशियारपुर से पधारे पुरोहित श्री शिव प्रसाद जी शास्त्री ने उपनिषदों के विशेष मन्त्रों से वैदिक जीवन शैली पर अपने विचार रखे और कहा कि इन्हीं विचारों ने समय के पटल पर महर्षि दयानंद सरस्वती के दिव्य आलोक में मुन्शी राम को महात्मा मुन्शी राम और फिर स्वामी श्रद्धानंद बना दिया। यही है वेद विचार जिससे समस्त संसार सही मार्ग पर चल सकता है। अंत में सभी उपस्थित आर्य जनों ने ऋषि लंगर का रसावादन किया। -विमला भाटिया उप प्रधाना

योग-ध्यान, साधना शिविर

आनन्दधाम (गढ़ी आश्रम) उधमपुर, जम्मू में आश्रम के मुख्य संरक्षक एवं निदेशक पूज्यपाद महात्मा चैतन्यमुनि जी के सान्निध्य में दिनांक 11 से 19 अप्रैल-2015 तक निःशुल्क योग ध्यान साधना शिविर का आयोजन किया गया है जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्राणायाम, योगासन आदि कराए जाएंगे तथा योगदर्शन-पाठ्पाठन की भी व्यवस्था है। शिविर में रोजड़, गुजरात से शिक्षित आचार्य श्री सन्दीप आर्य जी, प्रबुद्ध वैदिक प्रवक्ता श्री अखिलेश भारतीय जी आदि अन्य अनेक विद्वान् भी पधार रहे हैं। डा. सुरेश जी द्वारा रोगोपचार भी करेंगे। इस अवसर पर पूज्य महात्मा जी के ब्रह्मत्व में सामवेद परायण यज्ञ का आयोजन किया गया है। शिविर में साधक अपनी शंकाओं का समाधान भी कर सकेंगे। आश्रम में पूज्य महात्मा जी के सान्निध्य में पहले लगाए गए शिविरों में शिविरार्थियों के बहुत अच्छे अनुभव रहे हैं इसलिए साधकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। अतः इच्छुक साधक अपना स्थान आरक्षित करने के लिए फोन नं. 09419107788, 09419796949 अथवा 09419198451 पर तुरन्त सम्पर्क करें।

-भारतभूषण आनन्द, आश्रम प्रधान

स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस मनाया

आर्य समाज मन्दिर मेन बाजार दीनानगर में स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। प्रातः 5.30 बजे शहर में प्रभात फेरी निकाली गई। उसके पश्चात 9 बजे से 11.30 बजे तक प्रधान श्री धर्मेन्द्र गुप्ता की अध्यक्षता में बलिदान दिवस मनाया गया जिसमें स्वामी सदानन्द जी मुख्य अतिथि के तौर पर पधारे। मंच संचालन मंत्री योगेन्द्र पाल गुप्ता ने किया।

सर्वप्रथम हवन यज्ञ किया गया। उसके पश्चात् गुरूकुल दीनानगर के विद्यार्थियों द्वारा भजन आदि गाए गए। तत्पश्चात् योगेन्द्र पाल गुप्ता, प्रिं. गन्धर्व राज रमेश शास्त्री, जतिन्द्र शास्त्री, भारतेन्दु ओहरी जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर प्रकाश डाला। इन्होंने स्वामी जी को एक महान देशभक्त, सत्याग्रही, स्वतन्त्रता सैनानी, सत्यवादी, प्राचीन शिक्षा पद्धति 'गुरूकुल' के संस्थापक, क्रान्तिकारी समाज सुधारक बताया। रमेश शास्त्री ने कहा कि वह एक निर्भीक पुरुष थे जिन्होंने जामा मस्जिद की प्राचीर से वेद मन्त्रों के उच्चारण से अपना भाषण प्रारम्भ किया। अन्त में स्वामी सदानन्द जी ने कहा कि बलिदान दिवस मनाना तभी सार्थक होगा। यदि हम उनके आदर्शों पर चलें और अपने जीवन को सफल बनाएं। उन्होंने कहा कि स्वामी जी एक दृढ़ संकल्प वाले एक महान व्यक्ति थे, जो वकालत छोड़ कर एक गुरुकुल की नींव डालते हैं और अपनी सन्तान से गुरुकुल की शुरूआत करते हैं। इस अवसर पर वी. पी. ओहरी, रणजीत ओहरी, रणजीत शर्मा, राजेश महाजन, मनोरंजन ओहरी, मा. दिनेश, बलविन्द्र शास्त्री, मनोहर सैन, यशपाल ओहरी, नवल महाजन, ईश्वर भंल्ला, मुनी लाल, प्रेम भारत, प्रिं. बलवीर सलारिया, मा. रघुवीर सैनी, राजेश महाजन आर्य सीनियर सैकंडरी, सुमित्रा देवी और स्वामी सर्वानन्द मैमोरियल स्कूल झंगी का स्टाफ और बहुत से गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। अन्त में प्रधान जी ने सभी वक्ताओं और आर्यजनों का धन्यवाद किया। लंगर की व्यवस्था भी की गई थी।

पृष्ठ 6 का शेष- दक्षिणायन और उत्तरायण.....

वस्तुतः लोहड़ी शब्द देहात में गुड़ पकाने के कार्य को प्रारम्भ करने के लिए लोहे के बड़े-बड़े कड़ाहों का प्रयोग किया जाता था जिसका नाम लोह यज्ञ प्रचलित था। यह सामूहिक यज्ञ ही, अपभ्रंश शब्द के रूप में लोहड़ी बन गया। इस पर्व का केन्द्रबिन्दु यज्ञ की अग्नि के सदृश, सामूहिक काष्ठ संग्रह द्वारा, अग्नि प्रज्जवलन और उसमें ऋतु अनुकूल मिष्ट और बलप्रद पदार्थों की आहुति मन्त्रों के साथ देना है।

लोहड़ी 'नवशिशु'

'नवदम्पति' के लिए

इधर कुछ वर्षों से 'लोहड़ी' के साथ एक नई प्रथा जुड़ गई है। इसका रूप है उस वर्ष के नव दम्पत्ति और प्रथम शिशु जन्म के स्वागत और शुभकामनाओं के साथ परिवार या मोहल्ला मित्र बन्धुगण इत्यादि को आमन्त्रित कर गानवाद्य और आज के नव और धनाढ्य वर्ग में-आधुनिक नाच-नृत्य के साथ मनाया जाता है। इसमें तो गन्ना ताजा गुड़, मक्के की फुलियां, गजक, रेवड़ी आदि द्वारा अतिथि सत्कार किया जाता है। 16वीं सदी के इतिहास के अनुसार महाराजा रणजीत सिंह अपने समस्त परिवार, मन्त्रिमण्डल, दरबारियों और विदेशी अतिथियों सहित 'लोहड़ी' का पर्व मनाते थे।

लोहड़ी के साथ जुड़ी सामाजिकता-इस लोहड़ी के साथ एक प्रथा चिरकाल से जुड़ी हुई थी, जिसका अब प्रायः लोप हो रहा है। इसके लिए सम्बद्ध परिवार और मोहल्ले के व्यक्ति घर-घर जाकर लकड़ी, कोयला इत्यादि मांग कर इकट्ठा करते थे, जिससे इस पर्व को विशाल सामाजिकता और अपनत्व का रूप मिल जाता और उपनिषद् काल की प्रार्थना-ओ३म् सहनाववतु सहनौभुनक्तु सहवीर्य करवावहै। तेजस्विनाऽव धीतमस्तु मा विद्विषावहै। अर्थात् हम दोनों माता-पिता सहित परिवार जन और बंधुगण-मिलकर एक दूसरे का कल्याण करने एक साथ सुख प्रसन्नता का उपभोग करने और बल बढ़ाने वाले हों। तेजस्वी होकर शिक्षा सद्गुण प्राप्त करने वाले और कभी एक दूसरे के साथ द्वेष करने वाले न हों। पर आज के परिवेश में तो-'आता है याद मुझको गुजरा हुआ जमाना। वह एक साथ हंसना वह एक साथ खाना।' आज वह स्वप्न मात्र है।

thearyasamaj.org

 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17 RNI No. 26281/74

वेदवाणी

मन की अपार शक्ति को चैतन्य कर

आ त एतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे।
ज्योक् च सूर्यं दृशे।।

ऋषिः—बन्धुःसुबन्धुः।। देवता—विश्वेदेवाः।। छन्दः—निचृद्गायत्री।।

विनय—हे मनुष्य! जो तू इतना निर्बल, हतोत्साह और शिथिल हो गया है, इसका कारण तेरे मन की निर्जीवता है। तेरा मन निर्जीव हो गया है, मानो तुझमें मन रहा ही नहीं है। तेरे रोग का और कोई कारण नहीं है। तू अपनी इस मन्दता को—निर्बलता को दूर करने के लिए यों ही अप्राकृतिक दवाएँ खाता फिरता है; इनसे कुछ नहीं बनेगा। "वहम का इलाज लुक़मान के पास भी नहीं है।" वहम को छोड़कर अपने अन्दर तनिक उस जगद् व्यापक मन की धारा को प्रविष्ट होने दो जो सब संसार में व्यापक है और सब संसार को चला रही है—प्रत्येक मनुष्य के मन को हिला रही है। उस मनोमय धारा को तू जितना अपने अन्दर ग्रहण करेगा उतना तेरा मन सजीव होता जाएगा। तब तू फिर से ठीक तरह 'क्रतु'—कर्म कर सकेगा। तेरे अन्दर 'दक्ष'—बल आ जाएगा और तुझमें एक नये जीवन का संचार हो जाएगा तथा जगत् को प्राण देने वाले जो सूर्यदेव हैं उनका दर्शन करता हुआ—उनसे प्राण लेता हुआ तू दीर्घ आयु तक जीवित रहेगा। यह सब मनःशक्ति के प्रवेश का चमत्कार है, अतः हमारी तो परमात्मा से यही प्रार्थना है कि तुझमें मनःशक्ति का प्रवेश हो। इसी में तेरा कल्याण है। मनःशक्ति के बिना तो अन्य किसी भी उपचार से लाभ नहीं उठाया जा सकता, अतः मन ही को बढ़ा, मन ही को जगा, मन ही को चैतन्य कर।

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस मनाया

आर्य समाज बंगा रोड फगवाड़ा में रविवार 21 दिसम्बर-2014 को स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस मनाया गया, जिसमें आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान आचार्य श्री देवराज जी मुम्बई वाले एवं मधुर कण्ठ के स्वामी श्री अरुण वेदालंकार जी विशेष रूप से पधारे। आर्य समाज बंगा रोड फगवाड़ा के मन्त्री श्री देशबन्धु चोपड़ा जी एवं उनकी धर्म पत्नी श्रीमती कमलेश चोपड़ा जी अपने विवाह की पचासवीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य पर महान प्रभु के चरणों में नतमस्तक होते हुए पवित्र यज्ञ वेदी पर यजमान सुशोभित हुए। आचार्य वर श्री देवराज जी ने पवित्र वेद मन्त्रों द्वारा यज्ञ की पूर्णाहुति के पश्चात् यजमान परिवार को आशीर्वाद दिया। तत्पश्चात बलिदान दिवस कार्यक्रम आयोजित हुआ। सर्वप्रथम श्री अरुण वेदालंकार जी ने संगीत रचनाओं द्वारा यजमान दम्पत्ति को बधाई दी। तत्पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर आधारित उनके महान बलिदान को समर्पित भजन सुनाकर श्रोताओं में राष्ट्रभक्ति के विचारों से प्रोत्साहित किया। तत्पश्चात् मन्त्री श्री देशबन्धु चोपड़ा जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के महान बलिदान पर प्रकाश डालते हुए आचार्य श्री देवराज जी का उनके वेद-प्रचार कार्यक्रमों का देश विदेश में योगदान का परिचय दिया। तत्पश्चात् श्री देवराज जी ने स्वामी श्रद्धानन्द को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके समाज एवं राष्ट्र के प्रति समर्पित जीवन पर विस्तार से बताया। सभा के अन्त में मन्त्री जी ने सभी का धन्यवाद किया। यजमान परिवार की ओर से जलपान की व्यवस्था की गई।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे,
मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।